

डॉ. एस.एस. खन्ना

बनाम

मुख्य सचिव, पटना एवं अन्य

12 अप्रैल, 1983

[ई.एस. वेंकटरामैया और अमरेंद्र नाथ सेन, न्यायमूर्तिगण]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का अधिनियम 2) धाराएं 202, 300 और 319 — विस्तार और प्रकृति — क्या वह व्यक्ति जिसके विरुद्ध किसी अन्य व्यक्ति के साथ शिकायत दर्ज की गई है और जिसके विरुद्ध संहिता की धारा 202 के तहत जांच के बाद न्यायालय द्वारा कार्यवाही नहीं की गई है, उसे बाद के चरण में संहिता की धारा 319 के तहत उसी या संबंधित अपराध या अपराधों के लिए उन अन्य व्यक्तियों के साथ विचारण के लिए समन किया जा सकता है जिनके विरुद्ध न्यायालय द्वारा पहले आदेशिका जारी की गई थी — निर्णीत प्रकरण प्रबन्धन और पूर्वदोषमुक्ति के सिद्धांतों की प्रयोज्यता — भारत का संविधान, 1950 का अनुच्छेद 20 (2)।

नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ फाउंड्री एंड फोर्ज टेक्नोलॉजी, रांची के कर्मचारी संघ के महासचिव ने मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, रांची के समक्ष संस्थान के सुरक्षा अधिकारी बैंकटेश प्रसाद और संस्थान के निदेशक, अपीलकर्ता के विरुद्ध कार्रवाई करने के लिए एक शिकायत दर्ज की, जिसमें आरोप लगाया गया कि दोनों ने कुछ ऐसे कार्य किए हैं जो अपराध की श्रेणी में आते हैं, जिनमें पूर्ववर्ती धारा 323 और 504 भारतीय दंड संहिता के तहत और उत्तरवर्ती धारा 323 और 506 भारतीय दंड संहिता के तहत दंडनीय हैं। शिकायतकर्ता के बयान और दंड प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 202 के तहत 6 साक्षियों के साक्ष्य दर्ज करने के बाद, मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने महसूस किया कि अपीलकर्ता के विरुद्ध कार्यवाही के लिए कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं बनता है और तदनुसार उन्होंने उसके विरुद्ध आदेशिका जारी करने से इनकार कर दिया। उस आदेश के विरुद्ध शिकायतकर्ता द्वारा दायर एक पुनरीक्षण याचिका

को न्यायिक आयुक्त, रांची द्वारा खारिज कर दिया गया था। हालांकि, बैंकटेश प्रसाद के विरुद्ध आगे की कार्यवाही के दौरान, प्रथम श्रेणी न्यायिक दंडाधिकारी, रांची, जिनके न्यायालय में कार्यवाही स्थानांतरित की गई थी, ने शिकायतकर्ता द्वारा धारा 319 के तहत दायर एक आवेदन को स्वीकार कर लिया कि चूंकि साक्षियों के आगे के साक्ष्य में यह बात आई है कि अपीलकर्ता ने भी अपना रिवाँल्वर निकाला था और शिकायतकर्ता पक्ष को गोली मारने और जान से मारने की धमकी दी थी, इसलिए उसे बैंकटेश प्रसाद के साथ विचारण के लिए समन किया जाना चाहिए। अपीलकर्ता ने एक पुनरीक्षण याचिका में रांची स्थित पटना उच्च न्यायालय के समक्ष दंडाधिकारी के आदेश को चुनौती दी। वह याचिका खारिज कर दी गई।

अतः विशेष अनुमति द्वारा अपील।

अपील स्वीकार करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया: 1:1 दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 202 के तहत कार्यवाही की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, यह मानना कठिन हो सकता है कि उसी सामग्री पर शिकायत किए गए व्यक्ति के विरुद्ध धारा 319 के तहत कार्यवाही करने के लिए निर्णीत प्रकरण प्रबन्धन के सिद्धांत पर आधारित कोई कानूनी बाधा है, यदि न्यायालय ने धारा 203 के तहत शिकायत खारिज कर दी है। लेकिन उस प्रश्न पर कोई अंतिम राय व्यक्त करना आवश्यक नहीं है क्योंकि वर्तमान मामले में यह देखा गया है कि दंडाधिकारी ने संहिता की धारा 319 के तहत कार्रवाई करने का निर्णय उन नए साक्ष्यों के आधार पर लिया जो संहिता की धारा 202 के तहत परिकल्पित जांच समाप्त होने के बाद और बैंकटेश प्रसाद के विरुद्ध विचारण के दौरान कार्यवाही में अभिलेख पर लाए गए थे। [730 जी- एच, 731 ए- बी]

1:2 यहां तक कि जब धारा 202 के तहत आदेशिका जारी करने से इनकार करने वाले दंडाधिकारी के आदेश की पुष्टि उच्च न्यायालय द्वारा की जाती है, तब भी धारा 319 के तहत दंडाधिकारी का क्षेत्राधिकार अप्रभावित रहता है, यदि अन्य शर्तें पूरी होती हैं। [731- बी]

1:3 संहिता की धारा 300 में प्रतिपादित पूर्वदोषमुक्ति का सिद्धांत हालांकि इस मामले में लागू नहीं हो सकता है। वर्तमान मामले में, दंडाधिकारी के पास संहिता की धारा 319 के तहत अपीलकर्ता को समन करने का ठोस कारण था, क्योंकि विचारण में पेश किए गए साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि अपीलकर्ता को अभियुक्त के रूप में आपराधिक मामले में शामिल करने के लिए 1 मजबूत मामला बनाया गया था। [731 बी, 732 डी]

प्रमथनाथ तालुकदार बनाम सरोज रंजन सरकार [1962] अनुपूरक 2 एस.सी.आर. 297; *दिल्ली नगर निगम बनाम राम किशन रोहतगी और अन्य* [1983] 1 एस.सी.सी. 1 का अनुसरण किया गया।

2:1 संहिता की धारा 202 के तहत जांच का उद्देश्य इस तथ्य का पता लगाना है कि क्या शिकायत का कोई वैध आधार है जो शिकायत किए गए व्यक्ति को आदेशिका जारी करने की मांग करता है या क्या यह एक निराधार शिकायत है जिस पर कोई कार्रवाई करने की आवश्यकता नहीं है। धारा 202 के तहत उस व्यक्ति के दोष या अन्यथा के बारे में कोई निर्णय लेने की आवश्यकता नहीं है जिसके विरुद्ध शिकायत की गई है। [728 एच, 729 ए- बी]

2:2 संहिता की धारा 202 के तहत एक जांच विचारण की प्रकृति की नहीं है क्योंकि कानून में किसी भी अपराध के संबंध में केवल एक विचारण हो सकता है और विचारण केवल अभियुक्त को आदेशिका जारी होने के बाद ही शुरू हो सकता है। उक्त कार्यवाही कड़ाई से शिकायतकर्ता और अभियुक्त के बीच की कार्यवाही नहीं है। जिस व्यक्ति के विरुद्ध शिकायत दर्ज की जाती है, वह तब तक अभियुक्त नहीं बनता जब तक कि उसके विरुद्ध आदेशिका जारी करने का निर्णय नहीं ले लिया जाता। भले ही वह संहिता की धारा 202 के तहत कार्यवाही में भाग लेता है, वह एक अभियुक्त के रूप में नहीं बल्कि जनता के सदस्य के रूप में ऐसा करता है। [728 जी-एच]

वादीलाल पांचाल बनाम दत्तात्रेय दुलाजी घाडिगांवकर और एक अन्य, [1961] 1 एस.सी.आर. 1; चंद्र देव सिंह बनाम प्रकाश चंद्र बोस और एक अन्य, [1964] 1 एस.सी.आर. 639, संदर्भित।

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: 1980 की आपराधिक अपील संख्या 481

आपराधिक विविध वाद संख्या 405 वर्ष 1979 में पटना उच्च न्यायालय के दिनांक 2 मई, 1979 के निर्णय और आदेश से विशेष अनुमति द्वारा अपील।

अपीलकर्ता के लिए *डी.पी. सिंह और वी.जे. फ्रांस।*

उत्तरदाता के लिए *डी. गोबर्धन।*

शिकायतकर्ता के लिए *डी.पी. मुखर्जी।*

न्यायालय का निर्णय सुनाया गया।

वेंकटरामैया, न्यायमूर्ति इस मामले में विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या वह व्यक्ति जिसके विरुद्ध एक शिकायत दर्ज की गई है और जिसके विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का अधिनियम 2) (जिसे इसके बाद संहिता कहा गया है) की धारा 202 के तहत जांच के बाद न्यायालय द्वारा कार्यवाही नहीं की गई है, उसे बाद के चरण में संहिता की धारा 319 के तहत उसी या संबंधित अपराध या अपराधों के लिए उस अन्य व्यक्ति के साथ विचारण के लिए समन किया जाना चाहिए।

यह 1979 की आपराधिक विविध संख्या 405 में पटना उच्च न्यायालय के 2 मई, 1979 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध विशेष अनुमति द्वारा अपील है।

दूसरे उत्तरदाता द्वारा मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, रांची के समक्ष अपीलकर्ता और एक बैंकटेश प्रसाद के विरुद्ध कार्रवाई करने के लिए एक शिकायत पेश की गई थी, जिसमें आरोप लगाया गया था कि बैंकटेश प्रसाद ने कुछ ऐसे कार्य किए थे जो भारतीय दंड संहिता की धारा 323 और 504 के तहत दंडनीय अपराध थे और अपीलकर्ता ने धारा 323 के तहत अपराध के लिए उकसाया था और धारा 506 भारतीय दंड संहिता के तहत दंडनीय अपराध

भी किया था। बैंकटेश प्रसाद नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ फाउंड्री एंड फोर्ज टेक्नोलॉजी के सुरक्षा अधिकारी थे। अपीलकर्ता इसके निदेशक थे। शिकायतकर्ता संस्थान के कर्मचारियों के संघ के महासचिव थे। कथित घटना एक निश्चित श्रम विवाद के परिणामस्वरूप घटित हुई बताई गई थी। शिकायतकर्ता के सत्यनिष्ठ कथन और 6 साक्षियों के साक्ष्य दर्ज करने के बाद, मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने महसूस किया कि अपीलकर्ता के विरुद्ध कार्यवाही के लिए कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं बनता है और तदनुसार उन्होंने उसके विरुद्ध आदेशिका जारी करने से इनकार कर दिया। हालांकि, उन्होंने बैंकटेश प्रसाद के विरुद्ध मामले का संज्ञान लिया और 15 सितंबर, 1976 को उनकी उपस्थिति के लिए आदेशिका जारी की। मामला निपटान के लिए प्रथम श्रेणी न्यायिक दंडाधिकारी, रांची के पास स्थानांतरित कर दिया गया। शिकायतकर्ता ने अपीलकर्ता के विरुद्ध कार्यवाही बंद करने के मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी के आदेश के विरुद्ध न्यायिक आयुक्त, रांची के समक्ष एक पुनरीक्षण याचिका दायर की। वह याचिका 24 नवंबर, 1976 को न्यायिक आयुक्त द्वारा खारिज कर दी गई थी।

बैंकटेश प्रसाद के विरुद्ध कार्यवाही प्रथम श्रेणी न्यायिक दंडाधिकारी, रांची के समक्ष जारी रही, जैसा कि मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा निर्देशित किया गया था। उन कार्यवाहियों के दौरान, ऐसा प्रतीत होता है कि अभियोजन पक्ष के साक्षियों ने शपथ पर गवाही दी कि अपीलकर्ता ने बैंकटेश प्रसाद को शिकायतकर्ता को मारने का आदेश दिया था और अपीलकर्ता ने अपना रिवॉल्वर भी निकाला था और रिवॉल्वर उनकी ओर तानकर शिकायतकर्ता पक्ष को गोली मारने और जान से मारने की धमकी दी थी। ऐसा साक्ष्य दर्ज होने के बाद शिकायतकर्ता ने अपीलकर्ता को बैंकटेश प्रसाद के साथ विचारण के लिए समन करने हेतु संहिता की धारा 319 के तहत एक आवेदन किया। दंडाधिकारी द्वारा 2 अप्रैल, 1979 को यह आवेदन स्वीकार कर लिया गया कि मामले में पर्याप्त साक्ष्य हैं जो बताते हैं कि अपीलकर्ता ने धारा 323/109 और 506 भारतीय दंड संहिता के तहत दंडनीय अपराध किए हैं और अपीलकर्ता को अन्य अभियुक्तों के साथ विचारण का सामना करने के लिए

समन किया जाना चाहिए। अपीलकर्ता ने एक पुनरीक्षण याचिका में पटना उच्च न्यायालय के समक्ष दंडाधिकारी के आदेश को चुनौती दी। वह याचिका खारिज कर दी गई। पुनरीक्षण याचिका पर उच्च न्यायालय के आदेश के विरुद्ध यह विशेष अनुमति अपील दायर की गई है।

संहिता की धारा 319 इस प्रकार है:

"319. अपराध के दोषी प्रतीत होने वाले अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही करने की शक्ति — (1) जहां किसी अपराध की जांच या विचारण के दौरान साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि किसी ऐसे व्यक्ति ने जो अभियुक्त नहीं है, कोई ऐसा अपराध किया है जिसके लिए ऐसे व्यक्ति का अभियुक्त के साथ विचारण किया जा सकता है, वहां न्यायालय उस अपराध के लिए ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध कार्यवाही कर सकता है जो उसने किया प्रतीत होता है।

(2) जहां ऐसा व्यक्ति न्यायालय में उपस्थित नहीं है, वहां मामले की परिस्थितियों के अनुसार उसे उपरोक्त प्रयोजन के लिए गिरफ्तार किया जा सकता है या समन किया जा सकता है।

(3) कोई भी व्यक्ति जो न्यायालय में उपस्थित है, हालांकि वह गिरफ्तार नहीं है या समन पर नहीं है, उसे उस अपराध की जांच या विचारण के प्रयोजन के लिए न्यायालय द्वारा निरुद्ध किया जा सकता है जो उसने किया प्रतीत होता है।

(4) जहां न्यायालय उपधारा (1) के तहत किसी व्यक्ति के विरुद्ध कार्यवाही करता है, वहां —

(क) ऐसे व्यक्ति के संबंध में कार्यवाही नए सिरे से शुरू की जाएगी, और साक्षियों को फिर से सुना जाएगा;

(ख) खंड (क) के प्रावधानों के अधीन, मामला इस प्रकार आगे बढ़ सकता है जैसे कि वह व्यक्ति तब अभियुक्त रहा हो जब न्यायालय ने उस

अपराध का संज्ञान लिया था जिस पर जांच या विचारण शुरू किया गया था।"

संहिता की धारा 319 के अनुरूप प्रावधान 1898 की पूर्ववर्ती दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 351 थी। पुरानी संहिता की धारा 351 में प्रावधान था कि कोई भी व्यक्ति जो आपराधिक न्यायालय में उपस्थित है, भले ही वह गिरफ्तार न हो या समन पर न हो, उसे उस न्यायालय द्वारा किसी भी ऐसे अपराध की जांच या विचारण के प्रयोजन के लिए निरुद्ध किया जा सकता है जिसका ऐसा न्यायालय संज्ञान ले सकता है और जो साक्ष्य से प्रतीत हो सकता है कि किया गया है और उसके विरुद्ध कार्यवाही की जा सकती है मानो उसे गिरफ्तार किया गया हो या समन किया गया हो। इसमें आगे प्रावधान था कि जब ऐसा निरोध पुरानी संहिता के अध्याय XVIII के तहत जांच के दौरान या विचारण शुरू होने के बाद होता है, तो ऐसे व्यक्ति के संबंध में कार्यवाही नए सिरे से शुरू की जाएगी और साक्षियों को फिर से सुना जाएगा। उस धारा के तहत न्यायालय के लिए यह खुला नहीं था कि वह उस व्यक्ति को समन करे जो न्यायालय में उपस्थित नहीं था और उसे लंबित आपराधिक कार्यवाही में शामिल करे, भले ही न्यायालय को यह प्रतीत हो कि कार्यवाही में साक्ष्य से पता चलता है कि ऐसा व्यक्ति भी किसी ऐसे अपराध के करने में शामिल था जो उस अपराध से जुड़ा था जिसके लिए न्यायालय के समक्ष पहले से मौजूद अभियुक्त का विचारण चल रहा था। चूंकि आपराधिक न्यायालय को ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध भी कार्रवाई करने के लिए सशक्त बनाना वांछनीय पाया गया था, इसलिए संसद ने अपने 41वें प्रतिवेदन में विधि आयोग की सिफारिश पर वर्तमान संहिता में धारा 319 को ऊपर बताए अनुसार शामिल किया।

इस मामले में तय किया जाने वाला बिंदु यह है कि क्या जब एक दंडाधिकारी ने संहिता की धारा 202 के तहत जांच के चरण में किसी व्यक्ति के विरुद्ध आदेशिका जारी करने से इनकार कर दिया है, तो क्या वह बाद में उसे संहिता की धारा 319 के तहत समन कर सकता है।

संहिता की धारा 202 के तहत जांच विचारण की प्रकृति की नहीं है क्योंकि कानून में किसी भी अपराध के संबंध में केवल एक विचारण हो सकता है और वह विचारण अभियुक्त को आदेशिका जारी होने के बाद ही शुरू हो सकता है। उक्त कार्यवाही कड़ाई से शिकायतकर्ता और अभियुक्त के बीच की कार्यवाही नहीं है। जिस व्यक्ति के विरुद्ध शिकायत दर्ज की जाती है, वह तब तक अभियुक्त नहीं बनता जब तक कि उसके विरुद्ध आदेशिका जारी करने का निर्णय नहीं ले लिया जाता। भले ही वह संहिता की धारा 202 के तहत कार्यवाही में भाग लेता है, वह एक अभियुक्त के रूप में नहीं बल्कि जनता के सदस्य के रूप में ऐसा करता है। संहिता की धारा 202 के तहत जांच का उद्देश्य इस तथ्य का पता लगाना है कि क्या शिकायत का कोई वैध आधार है जो शिकायत किए गए व्यक्ति को आदेशिका जारी करने की मांग करता है या क्या यह एक निराधार शिकायत है जिस पर कोई कार्रवाई करने की आवश्यकता नहीं है। धारा के तहत उस व्यक्ति के दोष या अन्यथा के बारे में कोई निर्णय लेने की आवश्यकता नहीं है जिसके विरुद्ध शिकायत की गई है। ऐसे व्यक्ति को कानूनी रूप से संहिता की धारा 202 के तहत कार्यवाही में भाग लेने के लिए भी नहीं बुलाया जा सकता है। इन कार्यवाहियों की प्रकृति पर इस न्यायालय द्वारा दो मामलों *वादीलाल पांचाल बनाम दत्तात्रेय दुलाजी घाडिगांवकर एवं एक अन्य*¹ और *चंद्र देव सिंह बनाम प्रकाश चंद्र बोस एवं एक अन्य*² में विस्तार से चर्चा की गई है जिसमें पूर्ववर्ती दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 202 विचारार्थ आई थी। वर्तमान धारा 202 पूर्ववर्ती धारा 202 का सारभूत पुनरुत्पादन होने के कारण, उस धारा के तहत कार्यवाहियों की प्रकृति पर इस न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों को संहिता की धारा 202 के तहत कार्यवाहियों पर लागू माना जाना चाहिए।

फिर भी वर्तमान धारा 202 (1) में किए गए 2 संशोधनों पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है। पुरानी संहिता की धारा 202 (1) में जहां दंडाधिकारी शिकायत किए गए व्यक्ति की उपस्थिति को विवश करने के लिए आदेशिका जारी करने को स्थगित करने का निर्णय

1 [1961] 1 एस.सी.आर. 1.

2 [1964] आई एस.सी.आर. 639.

लेते थे, उन्हें ऐसे निर्णय के समर्थन में लिखित रूप में कारण दर्ज करने होते थे। वर्तमान धारा के तहत वह दायित्व अब नहीं है। दूसरा, पुरानी संहिता की धारा 202 (1) के तहत जांच करने का उद्देश्य 'शिकायत की सच्चाई या झूठ का पता लगाना' बताया गया था। नई धारा के तहत परिकल्पित जांच इस निर्णय के उद्देश्य से है कि आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त आधार है या नहीं। अब किया गया संशोधन स्पष्ट रूप से धारा 202 के तहत जांच के उद्देश्य को सामने लाता है, भले ही पूर्ववर्ती धारा में उपयोग किए गए शब्दों को भी न्यायालयों द्वारा उसी तरह समझा गया था जिस तरह वर्तमान धारा को शब्दबद्ध किया गया है। इस प्रकार धारा को धारा 203 की भाषा के अनुरूप लाया गया है जो दंडाधिकारी को शिकायत खारिज करने का अधिकार देती है यदि उनकी राय है कि 'आगे बढ़ने के लिए कोई पर्याप्त आधार नहीं है'। धारा 202 में बाद के परिवर्तन का उद्देश्य विधि आयोग के 41वें प्रतिवेदन में पाया जाना है जिसने इस प्रकार राय दी:

"16.9. धारा 202 शब्दों में कहती है कि आगे की जांच या अन्वेषण शिकायत की सच्चाई या झूठ का पता लगाने के उद्देश्य से है"...हम इसे अनुपयुक्त मानते हैं, क्योंकि उस स्तर पर शिकायत की सच्चाई या झूठ का निर्धारण नहीं किया जा सकता है; न ही किसी दंडाधिकारी के लिए यह कहना संभव है कि उसके समक्ष शिकायत सच है जब वह अभियुक्त को समन करने का निर्णय लेता है। वास्तविक उद्देश्य यह पता लगाना है कि 'आगे बढ़ने' के लिए आधार मौजूद है या नहीं, जो अभिव्यक्ति वास्तव में धारा 203 में उपयोग की गई है। इसलिए हम सोचते हैं कि धारा 202 की भाषा धारा 203 की भाषा के अनुरूप होनी चाहिए, और हमने तदनुसार उपयुक्त शाब्दिक परिवर्तन किए हैं।"

पुरानी संहिता की धारा 203 के तहत शिकायत खारिज करने के प्रभाव पर इस न्यायालय द्वारा *प्रमथ नाथ तालुकदार बनाम सरोज रंजन सरकार*³ में विचार किया गया है।

कपूर, न्यायमूर्ति, जिन्होंने बहुमत का निर्णय लिखा, ने पृष्ठ 354 पर इस प्रकार टिप्पणी की:

"दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 203 के तहत खारिज करने का आदेश, हालांकि, उन्हीं तथ्यों पर दूसरी शिकायत के मनोरंजन के लिए कोई बाधा नहीं है, लेकिन इसका मनोरंजन केवल असाधारण परिस्थितियों में ही किया जाएगा, जैसे कि जहां पिछला आदेश अपूर्ण अभिलेख पर या शिकायत की प्रकृति की गलतफहमी पर पारित किया गया था या यह स्पष्ट रूप से बेतुका, अन्यायपूर्ण या मूर्खतापूर्ण था या जहां नए तथ्य जो उचित तत्परता के साथ पिछली कार्यवाहियों में अभिलेख पर नहीं लाए जा सके थे, उन्हें प्रस्तुत किया गया है।"

जैसा कि विधि आयोग द्वारा सही टिप्पणी की गई है, उपरोक्त गद्यांश में न्यायालय द्वारा उल्लिखित परिस्थितियाँ उन सभी परिस्थितियों के लिए विस्तृत नहीं हो सकती हैं जब दूसरी शिकायत का मनोरंजन किया जा सकता है। दूसरी शिकायत का मनोरंजन अन्य उपयुक्त मामलों में भी किया जा सकता है, हालांकि यह असाधारण कारणों से होना चाहिए।

संहिता की धारा 202 के तहत कार्यवाही की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, यह मानना कठिन हो सकता है कि उसी सामग्री पर शिकायत किए गए व्यक्ति के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए निर्णीत प्रकरण प्रबन्धन के सिद्धांत पर आधारित कोई कानूनी बाधा है यदि न्यायालय ने धारा 203 के तहत शिकायत खारिज कर दी है। लेकिन उस प्रश्न पर कोई अंतिम राय व्यक्त करना आवश्यक नहीं है क्योंकि वर्तमान मामले में यह देखा गया है कि दंडाधिकारी ने संहिता की धारा 319 के तहत कार्रवाई करने का निर्णय उन नए साक्ष्यों के आधार पर लिया जो संहिता की धारा 202 के तहत परिकल्पित जांच समाप्त होने के बाद

3 1962 जे अनुपूरक 2 एस.सी.आर. 297.

और बैंकटेश प्रसाद के विरुद्ध विचारण के दौरान अभिलेख पर लाए गए थे। संहिता की धारा 300 में प्रतिपादित पूर्वदोषमुक्ति का सिद्धांत हालांकि इस मामले में लागू नहीं हो सकता।

यहां तक कि जब धारा 202 के तहत आदेशिका जारी करने से इनकार करने वाले दंडाधिकारी के आदेश की पुष्टि उच्च न्यायालय द्वारा की जाती है, तब भी धारा 319 के तहत दंडाधिकारी का क्षेत्राधिकार अप्रभावित रहता है यदि अन्य शर्तें पूरी होती हैं। *दिल्ली नगर निगम बनाम राम किशन रोहतगी और अन्य*⁴ में, जिसमें हम में से एक (वेंकटरामैया, न्यायमूर्ति) पक्ष थे, इस न्यायालय को धारा 319 के दायरे पर विचार करना था। उस मामले में एक खाद्य निरीक्षक ने दंडाधिकारी के समक्ष शिकायत दर्ज की थी जिसमें उनसे एक कंपनी के प्रबंधक और सभी निदेशकों के विरुद्ध कार्रवाई करने का अनुरोध किया गया था, जो खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम के कुछ प्रावधानों का उल्लंघन करते हुए टॉफियों के एक निश्चित ब्रांड के निर्माण के व्यवसाय में लगी हुई थी। जब दंडाधिकारी ने अभियुक्तों के विरुद्ध कार्रवाई शुरू की, तो उन्होंने कार्यवाहियों को रद्द करने की प्रार्थना के साथ संहिता की धारा 482 के तहत उच्च न्यायालय का रुख किया। उच्च न्यायालय ने उन सभी के विरुद्ध कार्यवाहियों को इस आधार पर रद्द कर दिया कि ऐसा कोई अभिकथन नहीं था कि उनमें से कोई भी कंपनी के मामलों का प्रभारी था जो टॉफियों का निर्माण कर रही थी। इस न्यायालय में अपील पर, जहां तक प्रबंधक का संबंध था, उच्च न्यायालय के आदेश को रद्द कर दिया गया क्योंकि उसके कर्तव्यों की प्रकृति से ही यह स्पष्ट था कि वह कंपनी द्वारा किए गए कथित अपराध के लिए कार्यवाही किए जाने के लिए उत्तरदायी था। लेकिन निदेशकों के संबंध में, उच्च न्यायालय के आदेश को बरकरार रखा गया क्योंकि उस स्तर पर यह पाया गया कि उनके विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त सामग्री नहीं थी। लेकिन, हालांकि, यह स्पष्ट कर दिया गया था कि यदि अभियोजन पक्ष बाद के चरण में उन निदेशकों में से किसी के विरुद्ध साक्ष्य पेश करने में सक्षम होता है, तो विचारण न्यायालय के लिए धारा 319 के तहत उसके

विरुद्ध कार्यवाही करना खुला था। उस संबंध में इस न्यायालय ने पृष्ठ 8 पर इस प्रकार टिप्पणी की:

"यह प्रावधान किसी भी न्यायालय को संज्ञान लेने और किसी भी व्यक्ति को जो उसके समक्ष अभियुक्त नहीं है, जोड़ने और अन्य अभियुक्तों के साथ उसका विचारण करने के लिए व्यापक शक्तियां देता है। यह प्रावधान इस न्यायालय द्वारा *जोगिंदर सिंह बनाम पंजाब राज्य* (1979) 1 एस.सी.सी. 345 के निर्णय का विषय भी था, जहां तुलजापुरकर, न्यायमूर्ति ने न्यायालय की ओर से बोलते हुए टिप्पणी की थी; (पृष्ठ 349 पर)

धारा 319 (1) का स्पष्ट पठन, जो जांच और विचारण के सामान्य प्रावधानों से संबंधित अध्याय XXIV में आता है, स्पष्ट रूप से दिखाता है कि यह सत्र न्यायालय सहित सभी न्यायालयों पर लागू होता है और इस प्रकार एक सत्र न्यायालय के पास किसी भी व्यक्ति को जो उसके समक्ष अभियुक्त नहीं है, लेकिन जिसके विरुद्ध विचारण के दौरान अपराध में उसकी संलिप्तता का संकेत देने वाले पर्याप्त साक्ष्य दिखाई देते हैं, उसे अभियुक्त के रूप में जोड़ने और उसे अन्य अभियुक्तों के साथ विचारण करने का निर्देश देने की शक्ति होगी,.....

इन परिस्थितियों में, इसलिए, यदि अभियोजन पक्ष किसी भी स्तर पर ऐसा साक्ष्य पेश कर सकता है जो न्यायालय को संतुष्ट करता है कि अन्य अभियुक्तों या जिन्हें अभियुक्त के रूप में शामिल नहीं किया गया है जिनके विरुद्ध कार्यवाही रद्द कर दी गई है, ने भी अपराध किया है, तो न्यायालय उनके विरुद्ध संज्ञान ले सकता है और अन्य अभियुक्तों के साथ उनका विचारण कर सकता है। लेकिन, हम यह भी जोड़ना चाहेंगे कि यह वास्तव में एक असाधारण शक्ति है जो न्यायालय को प्रदान की गई है और इसका उपयोग बहुत कम किया जाना चाहिए और केवल तभी किया जाना चाहिए जब उस अन्य व्यक्ति

के विरुद्ध संज्ञान लेने के लिए बाध्यकारी कारण मौजूद हों जिसके विरुद्ध कार्रवाई नहीं की गई है। इससे अधिक हम इस स्तर पर कुछ और नहीं कहना चाहेंगे। हम पूरा मामला संबंधित न्यायालय के विवेक पर छोड़ते हैं ताकि वह कानून के अनुसार कार्य कर सके। हम, हालांकि, यह स्पष्ट कर देंगे कि केवल यह तथ्य कि उत्तरदाता 2 से 5 के विरुद्ध कार्यवाहियां रद्द कर दी गई हैं, न्यायालय को अपने विवेक का प्रयोग करने से नहीं रोकेगा यदि वह पूरी तरह संतुष्ट है कि उसके समक्ष पेश किए गए अतिरिक्त साक्ष्य के आधार पर उनके विरुद्ध संज्ञान लेने का मामला बनता है।"

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि यह नहीं कहा जा सकता कि दंडाधिकारी के पास इस मामले में अपीलकर्ता के विरुद्ध कार्यवाही करने की कोई शक्ति नहीं थी। अभिलेख को देखने पर हमारी राय है कि दंडाधिकारी के पास संहिता की धारा 319 के तहत अपीलकर्ता को समन करने का अच्छा कारण था क्योंकि विचारण में दिए गए साक्ष्य से प्रतीत होता है कि अपीलकर्ता को अभियुक्त के रूप में आपराधिक मामले में शामिल करने के लिए एक मजबूत मामला बनाया गया था। हालांकि, हम इस मामले में जो आदेश पारित करने का प्रस्ताव रखते हैं, उसे देखते हुए इस पहलू का विस्तार से संदर्भ देना आवश्यक नहीं है।

वर्तमान मामले में, शिकायत 1976 में दर्ज की गई थी। दूसरे उत्तरदाता के विरुद्ध एक जवाबी शिकायत भी दर्ज की गई थी। दंडाधिकारी ने उस मामले में दूसरे उत्तरदाता को दोषी ठहराया था। अपील पर, अतिरिक्त न्यायिक आयुक्त, रांची ने दूसरे उत्तरदाता को दोषमुक्त कर दिया और दोषमुक्ति का उक्त आदेश अंतिम हो गया है। दूसरा उत्तरदाता, जो नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ फाउंड्री एंड फोर्ज टैकनोलजी, रांची का कर्मचारी था, उसे प्रश्नगत घटना में शामिल होने के लिए निलंबित कर दिया गया था। वह निलंबन आदेश तब से रद्द कर दिया गया है और वह सभी पिछले वेतन प्राप्त करने के बाद अपने कर्तव्यों पर वापस आ गया है। घटना में भाग लेने के लिए किसी अन्य कर्मचारी को सेवामुक्त या दंडित नहीं किया गया है।

4 नवंबर, 1981 को, नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ फाउंड्री एंड फोर्ज टैकनोलजी कर्मचारी संघ और प्रबंधन के बीच सभी लंबित मुद्दों को सुलझाते हुए एक समझौता हुआ है। समझौते के परिणामस्वरूप, यह कहा गया है कि दूसरे उत्तरदाता ने दंडाधिकारी के समक्ष मूल शिकायत को वापस लेने के लिए एक आवेदन भी दायर किया है जिससे ये कार्यवाहियां उत्पन्न हुई हैं। शिकायत दर्ज होने के बाद से हुई इन घटनाओं और अपीलकर्ता द्वारा किए गए कथित अपराधों की प्रकृति को देखते हुए और औद्योगिक शांति के हित में, हम महसूस करते हैं कि हालांकि हम उच्च न्यायालय द्वारा किए गए आदेश से सहमत हैं, अपीलकर्ता के विरुद्ध शुरू की गई इन कार्यवाहियों को समाप्त कर दिया जाना चाहिए। इसलिए, हम उच्च न्यायालय और दंडाधिकारी द्वारा पारित आदेशों को अपास्त करते हैं और संहिता की धारा 319 के तहत दूसरे उत्तरदाता द्वारा दायर आवेदन को खारिज करते हैं।

तदनुसार अपील स्वीकार की जाती है।

एस.आर.

अपील स्वीकृत।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।